साहित्य और समाज

अमित कुमार

शोध छात्र, मानविकी संकाय, रामचन्द्र चन्द्रवंशी विश्वविद्यालय, पलामू, झारखण्ड

सार

साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। साहित्यकार समाज में रहते हुए ही अपने साहित्य का सृजन करता है। बगैर समाज के साहित्यकार का कतई महत्व नहीं है। एक साहित्यकार समाज में विशेष परिवेश में रहकर समाज में क्या घटित हो रहा है, वह सब अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। साहित्य के जिन व्यक्तिक सुख-दु:ख, राग-विराग, हास-विलास एवं सफलता-असफलता आदि का चित्रण होता है। वे सब समाज से ही पनपे हैं। साहित्यकार ज्ञान और स्नेह के रूप से प्रभावित होते हैं। महान संतों तथा विद्वानों के कारण ही इस समाज में चेतना का संचार प्राप्त हुआ तथा निराशा से मुक्त हुए रीतिकाल में काव्य का पूरा सृजन मिलता है। समाज की दशा सुधारने के लिए आवश्यक है कि साहित्य को समाज के रूप में अपनाएँ और साहित्य के गुणों को समाज में उतारे। साहित्य से समाज को बहुत सारी प्रेरणा मिलती है इसलिए हमें समाज के उत्थान के लिए साहित्य को उपयोग में लाना चाहिए। साहित्य से ही समाज का उत्थान संभव है। इस प्रकार समाज को एक सही दिशा देने के लिए साहित्य का होना आवश्यक है। साहित्य का जन्म समाज के बिना असंभव है और अच्छे समाज का जन्म बिना साहित्य के असंभव हैं। समाज को साहित्य से नवजीवन प्राप्त होता है और साहित्य समाज के द्वारा ही गौरवान्वित होता है। प्रत्येक साहित्य अपने यग से प्रवाहित होता है। साहित्य किसी भी समाज, देश और राष्ट्र की नींव है। यदि नींव सुदृढ़ होगी तो भवन भी सुदृढ़ होगा। साहित्य अजर-अमर है। वह कभी नष्ट नहीं होता।

शब्द कुँजी: साहित्यकार, राष्ट्र, सामाजिकता, प्रतिबिंब, राष्ट्रीयता

परिचय:

साहित्य की सार्थकता इसी में है कि वह कितनी सूक्ष्मता और मानवीय संवेदना के साथ सामाजिक अवयवों को उद्घाटित करता है। साहित्य संस्कृति का संरक्षक और भविष्य का पथ-प्रदर्शक है। संस्कृति द्वारा संकलित होकर ही साहित्य लोकमंगल की भावना से समन्वित होता है। आज आवश्यकता है कि सभी वर्ग यह समझें कि साहित्य समाज के मूल्यों का निर्धारक है और उसके मूल तत्वों को संरक्षित करना जरूरी है क्योंकि साहित्य जीवन के सत्य को प्रकट करने वाले विचारों और भावों की सुंदर अभिव्यक्ति है। विभिन्न प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध यथा माता-पिता, पिता-पुत्र, भाई-बहन एवं सास-बहु आदि से परिवार का निर्माण होता है। क्योंकि इनमें आत्मीयता का गुण विद्यमान है। समाज एक अमूर्त धारणा है, जो एक समूह के सदस्यों के बीच पाए जाने वाले पारस्परिक संबंधों की जटिलता का बोध कराती है।" समाज एक संगठन है, औपचारिक संबंधों का योग है, जिसमें सहयोग देने वाले व्यक्ति एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं।

प्रस्तावना:

जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश से जगत में उजाला होता है, उसी प्रकार साहित्य के प्रकाश से समाज का अंधकार दूर होता है। समाज का अंधकार दूर करने में साहित्य का बहुत बड़ा योगदान है। समाज के मस्तिष्क से जो भाव निकलते हैं उसी संचित भाव को साहित्य के नाम से जाना जाता है। साहित्य की भावना में राष्ट्रीयता एवं सामाजिकता का भाव शक्तिहीन हो जाता है जिसके कारण समाज की गतिविधियों को व्यक्त करने के लिए एक सरल साधन प्राप्त होता है।

साहित्य तथा समाज का संबंध:

साहित्य तथा समाज एक दूसरे से बहुत करीब का संबंध रखते हैं। साहित्य में मानव समाज के भाव को व्यक्त करता है। इसके आधार पर कुछ विद्वानों ने साहित्य को समाज की ज्योति तथा समाज का ज्ञान और समाज का आईना कहा है। समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं। ये आदिकाल से लेकर आज तक एक-दूसरे पर

आश्रित व एक दूसरे के प्रेरणास्रोत रहे हैं। प्राचीन काल से ही मानव की प्रकृति साहित्य सृजन की रही है। क्योंकि साहित्य प्रत्येक युग में पाठकों के ध्यान को अपनी ओर आकृष्ट करने में समर्थ रहा है।

साहित्य और समाज का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है। साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब है। साहित्य का सृजन जन-जीवन के धरातल पर ही होता है। समाज की समस्त शोभा, उसकी सम्पन्नता और मान-मर्यादा साहित्य पर ही अवलम्बित है। सामाजिक शक्ति या सजीवता, सामाजिक अशान्ति या निर्जीवता एवं सामाजिक सभ्यता या असभ्यता का निर्णायक एकमात्र साहित्य ही है।

कवि एवं समाज एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं. अत: साहित्य समाज से भिन्न नहीं है। यदि समाज शरीर है तो साहित्य उसका मस्तिष्क। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबम्ब है।

साहित्य का उद्देश्य:

समाज का ही हित करना है। साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। वह सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होता है। अत:एव युग की समस्याओं, अवधारणाओं और भावनाओं के संतुलित रूप से ग्रहण करने की उसमें अधिक क्षमता होती है। "कवि या लेखक अपने समय का प्रतिनिधि होता है, उसे जैसा मानसिक तत्व मिलता है, वैसी ही उसकी कृति होती है। वह अपने समय के वायुमंडल में घूमते हुए विचारों को मुखरित कर देता है।

साहित्यकार अपनी कल्पना के द्वारा ऐसे मानदंड समाज के सामने रखता है जो उसकी भलाई कर सकें। प्राचीनकाल से ही भारत के साहित्य में हमेशा बुराई पर अच्छाई की विजय दिखाई जाती रही है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि साहित्य में समाज को प्रेरित करने एवं सही दिशा प्रदान करने की असीमत अनन्त शक्ति होती है। समाज को अच्छे और बुरे की तरफ ले जाने की शक्ति साहित्य में ही है।

साहित्य का लक्ष्य:

साहित्य हमारे आन्तरिक भावों को जीवित रखकर हमारे व्यक्तित्व को स्थिर रखता है। वर्तमान भारतवर्ष में दिखाई देनेवाला परिवर्तन अधिकांशत: विदेशी साहित्य के प्रभाव का ही परिणाम है। राम ने यूनान पर राजनैतिक विजय प्राप्त की थी।

साहित्य की विजय शाश्वत होती है और शस्त्रों की विजय क्षणिक। अंग्रेज तलवार द्वारा भारत को दासता की शृंखला में इतनी दृढ़तापूर्वक नहीं बाँध सके, जितना अपने साहित्य के प्रचार और हमारे साहित्य का ध्वंस करके सफल हो सके। यह उसी अंग्रेजी का प्रभाव है कि हमारे सौन्दर्य सम्बन्धी विचार, हमारी कला का आदर्श, हमारा शिष्टाचार आदि सभी यूरोप के अनुरूप हो गए है।

साहित्य का समाज पर प्रभाव:

साहित्य के प्रभाव में कोई भी काल परे नहीं है तथा साहित्य का प्रभाव सभी काल पर पड़ता है समाज को अपनी आवश्यकताों की सुविधा के लिए साहित्य पर निर्भर होना पड़ता है एक अच्छा साहित्य समाज के स्वरूप में आवश्यकता की पूर्ति करता है साहित्य की शक्ति तलवार बम गोल से भी बड़ी होती है। समाज को साहित्य का आईना माना जाता है। साहित्य में समाज की सभी प्रकारों की समस्याओं का समाधान मिलता है साहित्य में सामाजिक परम्पराएँ, घटनाएँ तथा परिस्थितियाँ आदि समाज की जनता को प्रेरित करता है। साहित्यकार भी समाज की प्राणी कहलाता है तथा वह इस प्रभाव से दूर नहीं रह सकता। हम समाज में जो कुछ भी देखते है और सीखते हैं उसे साहित्य के रूप में अभी व्यक्त करते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि समाज का साहित्य पर प्रभाव पड़ता है।

समाज के उत्थान में साहित्य का योगदान:

मानव स्वभावत: क्रियाशील प्राणी है। चुपचाप बैठना उसके लिए संभव नहीं है। इसी प्रवृत्ति के कारण समाज में समय-समय पर क्रोध, भय, आश्चर्य, शांति, उत्साह, करुणा, दया, आशा तथा हर्षोल्लास का प्रादुर्भाव होता है। साहित्यकार इन्हीं भावनाओं को मूर्त रूप देकर-साहित्य का निर्माण करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। बिना समाज के उसका जीवन नहीं है और बिना उसके समाज की सत्ता नहीं। समाज का केन्द्र मानव हैं और साहित्य का केन्द्र भी मानव ही है।

साहित्य यह सशक्त माध्यम है, जो समाज को व्यापक रूप से प्रभावित करता है। यह समाज में प्रबोधन की प्रक्रिया का सूत्रपात करता हैं। लोगों को प्रेरित करने का कार्य करता है और जहाँ एक ओर यह सत्य के सुखद परिणामों को रेखांकित करता हैं, वहीं असत्य का दुखद अंत कर सीख व शिक्षा प्रदान करता है। अच्छा साहित्य

व्यक्ति और उसके चरित्र निर्माण में भी सहायक होता है। यही कारण है कि समाज के नवनिर्माण में साहित्य की केंद्रीय भूमिका होती है। इससे समाज को दिशा-बोध होता है और साथ ही उसका नवनिर्माण भी होता है। साहित्य समाज को संस्कारित करने के साथ-साथ जीवन मूल्यों की भी शिक्षा देता है एवं कालखंड की विसंगतियों, विपदाओं एवं विरोधाभासों को रेखांकित कर समाज का संदेश प्रेषित करता है, जिससे समाज में सुधार आता है और सामाजिक विकास की गति मिलती है।

साहित्य में मूलत: तीन विशेषताएँ होती हैं जो इसके महत्व को रेखांकित करती हैं। उदाहरणस्वरूप साहित्य-अतीत से प्रेरणा लेता है, वर्तमान को चित्रित करने का कार्य करता है और भविष्य का मार्गदर्शन करता है। साहित्य को समाज का दर्पण भी माना जाता है। हालाँकि जहाँ दर्पण मानवीय बाहय विकृतियों और विशेषताओं का दर्शन कराता है वहीं साहित्य मानव की आंतरिक विकृतियों और खूबियों को चिह्नित करता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि साहित्यकार समाज में व्याप्त विकृतियों के निवारण हेतु अपेक्षित परिवर्तनों को भी साहित्य में स्थान देता है। साहित्यकार से जिन वृहत्तर अथवा गंभीर उत्तरदायित्वों की अपेक्षा रहती है। मानव अपने मन में उठने वाले भावों को जब लेखनीबद्ध कर भाषा के माध्यम से प्रकट करने लगता है तो वह रचनात्मकता ज्ञानवर्धक अभिव्यक्ति के रूप में साहित्य कहलाता है। जीवन और साहित्य की प्रेरणाएँ समान होती हैं। समाज और साहित्य में अन्योन्याश्रित संबंध होता है। साहित्य की परदर्शिता समाज के नवनिर्माण में सहायक होती है जो खामियों को उजागर करने के साथ उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है। समाज के यथार्थवादी चित्रण, समाज सुधार का चित्रण और समाज के प्रसंगों की जीवंत अभिव्यक्ति द्वारा साहित्य समाज के नवनिर्माण का कार्य करता है। बुद्ध तुलसी, कबीर, रैदास आदि ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों का समाजीकरण किया था जिसने आगे चलकर अविकसित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में समाज में स्थान पाया।

समाज का स्वरूप :

जहाँ जीवन है वहाँ समाज भी उपलब्ध है। सामाजिक भावना सभी प्राणियों में कम या ज्यादा विद्यमान रहती है। परन्तु, मनुष्य की सामाजिकता, अत्यंत विकसित होती है। इसी का रण इसे सामाजिक प्राणी कहते हैं। मनुष्य में एक पारिवारिक सम्बन्ध रहता है। कथाकार राजेंद्र यादव के अनुसार, "सम्बन्ध ही वह कड़ी है, जो व्यक्ति और समाज के अस्तित्व का विकास और प्रगति को सार्थक करता है। जहाँ यह सम्बन्ध बिगड़ा की दोनों एक दूसरे को फाड़ खाने को दौड़े। प्रतिदिन परिवर्तित होते व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध कि यह कड़ी ही आज अलग हो गया है।

साहित्य समाज का दर्पण

साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। समाज की गतिविधियों से साहित्य अवश्य प्रभावित होता है। साहित्यकार समाज का चेतन और जागरूक प्राणी होता है। वह समाज के प्रभाव से अनभिज्ञ और अछूता न रहकर उसका भोक्ता और अभिन्न अंग होता है। इसलिए वह समाज का कुशल चित्रकार होता है। उसके साहित्य में समाज का विम्ब प्रतिबिम्ब रूप दिखाई पड़ता है। समाज का सम्पूर्ण अंग यथार्थ और वास्तविक रूप में प्रस्तुत होकर मर्मस्पर्शी हो उठता है। यही नहीं समाज का अनागत रूप भी काल्पनिक रूप में ही हमें संकेत करता हुआ आगाह करता है। इस दृष्टिकोण से साहित्य और समाज का परस्पर सम्बन्ध एक दूसरे पर निर्भर करता हुआ स्पष्ट होता है।

साहित्य समाज का दर्पण ऐसा कहने का अर्थ यही है कि साहित्य समाज का न केवल कुशल चित्र है, अपितु समाज के प्रति उसका दायित्व भी है। वह सामाजिक दायित्वों का बहन करता हुआ उनको अपेक्षित रूप में निबाहने में अपनी अधिक से अधिक और आवश्यक से आवश्यक भूमिका अदा करता है। समाज में फैली हुई अनैतिकता, अराजकता, निरंकुशता जैसे अवांछनीय और असामाजिक तत्वों के दुष्प्रभाव को बड़े ही मर्मस्पर्शी रूप में सामने लाता है। इससे ऐसे तत्वों के प्रति घृणा, कटुता, दूरी और अलगाव की दृष्टि डालते हुए इन्हें हतोत्साहित किया जा सके।

साहित्य समाज का दर्पण इसलिए कहा गया है कि उसके माध्यम से हम युग विशेष की समस्याओं, परिस्थितियाँ तथा भावनाओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। साहित्य जीवन की अभिव्यक्ति है। साहित्य में ही जातीय भावों का प्रतिबिंब देख सकते हैं।

साहित्य में समाज की खोज:

साहित्य में समाज के खोज के अर्थ को जानने से पहले हमें इस बात पर विचार कर लेना आवश्यक जान पड़ता है कि साहित्य और समाज में किस तरह के सम्बन्ध हैं? क्योंकि साहित्य की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं।

बालकृष्ण भट्ट ने साहित्य को जन समूह के हृदय का विकास माना है तो महावीर प्रसाद द्वेदी ने साहित्य को ज्ञानराशि का संचित कोश माना है। मुक्तिबोध ने कलाकृति को जीवन की पुनर्रचना माना है और रामचन्द्र शुक्ल ने साहित्य को जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब माना है। साहित्य समाज में होने वाली घटनाओं को केवल हूबहू प्रस्तुत नहीं कर देता बल्कि समस्याओं से निकलने की राह भी दिखाता है। शायद इसीलिए प्रेमचंद ने साहित्य को समाज के आगे आगे चलने वाली मशाल कहा है। इसके साथ ही वह साहित्य का उद्देश्य सिर्फ मनोरंजन करना नहीं मानते हैं बल्कि साहित्य को व्यक्ति के विवेक को जाग्रत करने वाला हैं। साहित्य में समाज के खोज की प्रक्रिया में उपलब्ध समाजशास्त्रीय पद्धतियों से बहुत मदद मिल सकती है। साहित्य के सामाजिक आधार को रेखांकित करना है तथा समाज की बदलती परिस्थितियों के साथ साहित्य में परिवर्तन को बतलाना है। इस प्रक्रिया के तहत नए समाज के निर्माण में रचनाकार की आकांक्षाओं और रचना प्रक्रिया को महत्व देना भी आलोचक का दायित्व हो सकता है। इस प्रकार साहित्य में समाज गहरे रूप से व्याप्त है और उसकी खोज की जानी चाहिए क्योंकि साहित्य अंततः तिथिरहित सामाजिक इतिहास है।

सामाजिक परिवर्तन और साहित्यः

साहित्य और समाज के इस अटुट सम्बन्ध को हम विश्व-इतिहास के पृष्ठों में भी पाते है। फ्रांस की राज्य-क्रान्ति के जन्मदाता वहाँ के साहित्यकार रूसो और वाल्टेयर हैं। इटली में मैजिनी के लेखों ने दो को प्रगति की ओर अग्रसर किया। हमारे देश में प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में भारतीय ग्रामों की आँसुओं-भरी व्यथा-कथा को मार्मिक रूप में व्यक्त किया। उन्होंने किसानों पर जमींदारों द्वारा किए जानेवाले अत्याचारों का चित्रण कर जमींदारी-प्रथा के उन्मूलन का जोरदार समर्थन किया। स्वतन्त्रता के पश्चात् जमींदारी उन्मूलन और भूमि-सुधार की दृष्टि से जो प्रयत्न किए गए हैं; वे प्रेमचन्द आदि साहित्यकारों की रचनाओं में निहित प्रेरणाओं के ही परिणाम हैं। बिहारी ने तो मात्र एक दोहे के माध्यम से ही अपने नवोढ़ा रानी के प्रेमपाश में बँधे हुए तथा अपनी प्रजा एवं राज्य के प्रति उदासीन राजा जयसिंह को राजकार्य की ओर प्रेरित कर दिया था।

साहित्यकार का महत्व :

कवि और लेखक अपने समाज के मस्तिष्क भी हैं और मुख भी। साहित्यकार की पुकार समाज की पुकार है। साहित्यकार समाज के भावों को व्यक्त कर सजीव और शक्तिशाली बना देता है। वह समाज का उन्नायक और शुभचिन्तक होता है। उसकी रचना में समाज के भावों की झलक मिलती है। उसके द्वारा हम समाज के हृदय तक पहुँच जाते हैं।

निष्कर्ष :

साहित्य और समाज एक दूसरे के अभिन्न अंग है। एक के विनाश से दूसरे का भी अंत हो जाता है। इसलिए विश्व के जिन प्राचीन समाज का आज अस्तित्व कहीं दिखाई नहीं देता, उसका मूल कारण वहाँ के साहित्य का नष्ट-भ्रष्ट हो जाना है। साहित्य समाज का प्रतिबिंब नहीं अपितु उन्नायक है और समाज साहित्य के लिए महत्वपूर्ण भाव भूमि है। समाज और साहित्य में आत्मा और शरीर जैसा सम्बन्ध है। समाज और साहित्य एक-दूसरे के पूरक हैं, इन्हें एक-दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि साहित्यकार सामाजिक कल्याण को ही अपना लक्ष्य बनाकर साहित्य का सृजन करते रहें। हमारे जीवन में साहित्य का ऐसा महत्व है जो कभी खत्म नहीं हो सकता साहित्य से हमारे समाज को आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है। सही दिशा मिलती है जिस पर चलकर हम एक श्रेष्ठ समाज का निर्माण कर सकते हैं साहित्य मानव जीवन को सुधारने के साथ समाज के पथ प्रदर्शन में भी सुधार करता है साहित्य में मानव जीवन के अतीत का भी वर्णन मिलता है। वर्तमान का चित्रण भी प्रदर्शित होता है तथा भविष्य के निर्माण की भी प्रेरणा मिलती है। इसी कारण हम कह सकते हैं कि साहित्य और समाज का गहरा संबंध है साहित्य और समाज को परिवर्तित करता है। एक स्वस्थ साहित्य इस प्रकार कार्य करता है कि वह समाज को मार्गदर्शन दे रहा हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. विश्वेश्वरैया (अनु.) समाज, पृष्ठ-25
2. विश्वेश्वरैया (अनु.) समाज, पृष्ठ-26
3. राजेंद्र यादव, कहानी : स्वरूप और संवेदन, पृष्ठ-43
4. प्रेमचन्द, कुछ विचार-साहित्य का उद्देश्य, पृष्ठ 3
5. विजयेंद्र स्नातक, विचार के क्षण, पृष्ठ-13
6. मैथिलीशरण गुप्त, भारत-भारती, पृष्ठ-10